Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 4, March-2019, ISSN 2230-7540

# जन सामान्य के संदेश प्रेषण में बुन्देलखण्ड के लोक एवं पारम्परिक माध्यम की भूमिकाः एक अध्ययन

**Jai Singh[1]* Prof. C. P. Painuli[2]**

[1] Assistant Professor, Bhaskar Institute of Mass Communication and Journalism, Bundelkhand University, Jhansi

[2] Assistant Professor, Bhaskar Institute of Mass Communication and Journalism, Bundelkhand University, Jhansi

***सारांश –*** *संचार मानव के स्वभाव का अभिन्न अंग है। संचार किसी भी समाज की आधारभूत आवश्यकता और जीवन की धुरी है। पारम्परिक लोक माध्यमों का उद्भव आदिकाल में ही हुआ है।संचार का यह सर्वाधिक प्रभावी माध्यम है। इन माध्यमों के द्वारा साक्षर तथा निरक्षर दोनों ही समूहों सार्थक एवं प्रभावी ढंग से सन्देश प्रसारित किए जा सकते है। इन माध्यमों के अन्तर्गत धार्मिक प्रवचन कथा, वार्ता, गीत, संगीत, लोकसंगीत, लोककलाएं, लोकनाट्य आदि आते है। भाषायी आधार पर बुन्देलखण्ड के निवासियों की बोली बुन्देली है, बुन्देलखण्ड़ के लोकगीत, लोकनृत्य और वाद्ययन्त्र महत्वपूर्ण है। इसके लोकगीत मौसम, देवी-देवताओं, संस्कार, समाज की विषय वस्तुओं को लिये हुए है। वहीं लोकनृत्य, वधावा, पलना, दिवारी, होरी, राई और घट, जवारा, लंगुरिया, झिंझिया, ठोला, रावला, स्वांग आदि है। वही बुन्देली लोकवाद्य ढोलक, नगढिया, सारंगी, बासुरी, खंजरी, ठप, लोटा, चमीटा, झीका, मंजीरा और रमतुला है। शहर पर आधारित आधुनिक माध्यमों की तुलना में ग्राम आधारित लोक माध्यम ग्रामीण लोगो के द्वारा अधिक विश्वसनीयता से स्वीकार किये जाते है। पारम्परिक माध्यमों पर परिवार कल्याण, अशिक्षा आदि कार्यो का प्रभावी ढंग से सन्देश दिया जाता है। लन्दन सेमिनार ने घोषित किया था कि परिवार नियोजन जैसे कार्यक्रमों के लिए परंपरागत माध्यम अतिप्रभावी है।*

----------X----------

## परिचय

संचार एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। हमारी मुद्रा, चलने का ढंग, बात करने का तरीका या काम करने का तरीका अन्य लोगों द्वारा अवलोकित किया जाता है तथा वह दूसरे के साथ संचार करता है। यहां तक कि हमारी पोशाक और आभूषण भी संचार का एक माध्यम हो कसते हैं, उदाहरण के लिए, किसी व्यक्ति को देखकर, यह कहा जा सकता है कि वह व्यक्ति किसी निश्चित स्थान से सम्बन्धित है या उसकी वेशभूषा किसी विशेष राज्य से सम्बन्धित है।

संचार, मानवीय स्वभाव का अभिन्न अंग है। "मनुष्य द्वारा शब्द, संगीत, हाव-भाव इत्यादि रूपों से होने वाली सम्प्रेषण प्रक्रियाएं संचार का अंग है।"[1] संचार किसी भी समाज की आधारभूत आवश्यकता और जीवन की धुरी है। संचार ही मानव समाज की विकास प्रक्रिया को संभव बनाता है। सदियों से अलग-अलग समाजों ने संचार के लिए विशिष्ट माध्यमों को विकसित किया है। आदिम समाजों में सामूहिक नृत्य-गायन और साथ भोजन करना संचार के सशक्त माध्यम होते थे। इससे लोगों के बीच सामूहिक एकता की भावना जागृत हुई। संप्रेषण की आवश्यकता मनुष्य को उसी भांति है जिस प्रकार भोजन और पानी की। संप्रेषण एक अत्यन्त व्यापक अवधारणा है जिसमें मनुष्य द्वारा अभिव्यक्ति के सभी प्रकार के माध्यम शब्द, चित्र, संगीत, अभिनय, मुद्रण आदि समाहित किए जा सकते हैं। संचार एक सहज प्रवृत्ति है और मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता भी।

बिल्बर श्राम के अनुसार, 'संचार वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा स्रोत से श्रोता तक संदेश पहुंचता है'। डैनिस मैकक्वैल ने संचार को सरल अर्थों में एक व्यक्ति से दूसरे तक भेजे जाने वाले संदेश का नाम दिया है। समस्त प्राणी जगत, संचार की लम्बी एवं नैसर्गिक श्रंखला से जुड़ा हुआ है।

प्रागैतिहासिक काल में लोगों के द्वारा चित्र बनाकर अपनी बात सम्प्रेषित करने की तकनीक आज इंटरनेट में भी प्रयोग की जा रही है। इंटरनेट की इस तकनीक से आज एक साथ कई लोगों को वैश्विक स्तर पर संदेश सम्प्रेषित किया जा सकता है। "मानव संचार लगभग 5,00,000 वर्ष पहले

www.ignited.in

उच्चारित शब्दों के साथ प्रारम्भ हुआ था। प्रतीकों को लगभग 30,000 वर्ष पहले विकसित किया गया था और लगभग 5000 वर्ष पहले लिखित रूप में प्रचलन में आया था।[2]

सं्ाचार की प्रारम्भिक पद्धतियां मनुष्य के पृथ्वी पर प्रकट होने के बाद से विभिन्न रूपों में मौजूद है। जब से मानव की उत्पत्ति हुई तब से उसने अपनी इच्छाओं, संवेगों एवं भावनाओं को मूर्त रूप प्रदान करने हेतु हाव-भावों का प्रयोग किया जो कालान्तर में भाषा के रूप में विकसित हुई। भाषा ने ही मानव के सामाजिक व सांस्कृतिक जीवन के विकास को संभव बनाया। आज सूचना की आवश्यकता व महत्व के चलते मानव ने दूसरों तक संदेश पहुंचाने के कई आधुनिक संचार साधनों का विकास कर लिया है। गीत, नृत्य, अभिनय, संगीत, काव्यकला, चित्रकला स्थापत्य कला आदि संचार के विभिन्न माध्यम ही हैं। कालखण्ड के आधार पर हम माध्यमों को दो भागों में बांट सकते हैः-

- आधुनिक जन माध्यम-मुद्रित (समाचारपत्र, पत्रिकाएं आदि), इलेक्ट्रोनिक (रेडियो टेलीविजन), सिनेमा एवं नव माध्यम (इन्टरनेट, सोशल मीडिया आदि)।
- लोक एवं पारम्परिक माध्यम - धार्मिक आयोजन यथा मेले, प्रवचन, कथा, वार्ता, नाटक, लोकनाट्य, लोककलाएं, रामलीला, कठपुतली, गीत संगीत आदि।

## लोक एवं पारम्परिक माध्यम की अवधारणा

पारम्परिक लोक माध्यमों का उद्भव आदिकाल में ही हुआ है। जब मनुष्य संचार का अर्थ भी नहीं जानता था तब से ये माध्यम अस्तित्व में है। सभ्यता के विकास से लेकर मुद्रण यन्त्र के आविष्कार तक यही माध्यम समाज में सन्देश प्रसारण का कार्य करते थे। सम्भवतः संचार का यह सर्वाधिक प्रभावी माध्यम है। इन माध्यमों के द्वारा साक्षर तथा निरक्षर दोनों ही समूहों सार्थक एवं प्रभावी ढंग से सन्देश प्रसारित किए जा सकते है। इन माध्यमों के अन्तर्गत धार्मिक प्रवचन कथा, वार्ता, गीत, संगीत, लोकसंगीत, लोककलाएं, लोकनाट्य आदि आते है।[3] इन लोक माध्यमों की सबसे बडी विषेशता है कि मनुष्यों द्वारा उस समूह की संस्कृति, भाषा, परिवेश एवं रुचि के अनुरूप सन्देशों का सम्प्रेषण किया जाता है जिस समूह में सन्देश प्रसारित करना होता है। "परंपरागत-संचार माध्यम ग्रामीण व्यक्तियों को परंपरागत उत्तराधिकार में मिलने वाले संचार माध्यम है। परंपरागत संचार माध्यमों के विशेषज्ञ संदेशों को स्थानीय लोकप्रिय भाषा में परिवर्तित कर सकते हैं। ये मानक ग्राम्य संस्कृति की देन है जिसकी मौलिकता और विश्वसनीयता स्वयंसिद्ध है।"[4]

## लोकगीतों का उदभव

संगीत के बिना जीवन नीरस और आनंदरहित हो जाता है। पूरे विश्व में संगीत मुख्यतः दो रुपों, शास्त्रीय संगीत एवं लोकसंगीत में पाया जाता है। वस्तुतः गायन, वादन और नृत्य की त्रिवेणी को ही संगीत कहते है इन तीनों के मूल आधार स्वर और लय है। गायन में स्वर और लय के साथ शब्द का योग हो जाता है जिससे उसमें लचीलापन कुछ कम हो जाता है किन्तु काव्य की विशेषताए ग्रहण कर लेने से अधिक सार्थक एवं व्यापक बन जाता है काव्य की विशेषताओं के ग्रहण कर लेने से गायन की उपयोगिता मानव के लिए बढ जाती है वाद्य कला में स्वर और लय का ही एकछत्र राज्य होता है इसमें न तो गायन की तरह काव्य की आवश्यकता है और न ही नृत्य की भांति अंग संचालन की। वाद्य संगीत, गायन तथा नृत्य की तुलना में अधिक सूक्ष्म और अकृतिम आनंद प्रदान करने वाला होता है इस विशेषता के कारण एक ओर सामान्य जन की समझ से परे हो जाता है वहीं दूसरी ओर अबोध शिशुओं एवं मानवेतर प्राणियों हेतु आकर्षण का प्रबल केन्द्र भी है। पूजा, मांगलिक कार्यो हेतु विशेष वाद्य यंत्रों का प्रयोग किया जाता रहा है। इस प्रकार से श्रोताओं को सम्बद्व वस्तु स्थिति का ज्ञान हो जाता है जैसे घन्टा, शंख, घडियाल आदि की आवाज सुनकर मन्दिरों की पूजा का संकेत मिल जाता है।[5]

आदिमानव के मन में जब से चेतना जागी उसने अपनी सुख, दुख और अपनी प्रतिक्रिआओं को ध्वनि का सहारा लेकर मुक्त कंठ से व्यक्त किया। इन ध्वनियों की पुनरावृत्ति होने लगी अभिव्यक्ति और घटना के सम्बन्ध के आधारं पर अर्थबोध होने लगा और इन्हें संज्ञा दी जाने लगी। अबाध गति से चली आ रही यह मानवीय प्रक्रिया विभिन्न दलों, समूहों, बस्तियों आदि के द्वारा चीखने चिल्लाने के बदले गति में, लय में आकर्शक स्वर समूहों में व्यक्त होने लगे तो जनमानस की धुनें उभरी। कालान्तर में इसे जब शब्दों का आवरण दिया गया तो यह लोकसंगीत कहलाने लगे।[6]

लोक शब्द का अर्थ, जन, संसार और समाज होता है। जो लोग आडम्बर और परिष्कार से दूर रहकर अपनी पुरानी स्थिति में रहते हैं उन्ही को लोक कहा गया है। लोकसंस्कृति में लोकसाहित्य रीति रिवाज विश्वास सम्मलित होते है। शास्त्रीय विधि विधानों से हटकर मानव जब आनन्दातिरेक में छन्दवद्ध वाणी सहज ही अभिव्यक्त करता है तो वही लोकसंगीत होता है। हमारे देश में अधिकाशतः लोकगीत अधिकांशतः सामूहिक होते है। जीवन की सरलता के समान ही सहज स्वर, सरल धुनों और गीतों के चरणों को पहले चरण और अन्तरा की तरह दोहराते जाना एक परम्परा सी

www.ignited.in

बन गयी। इससे लोगों को उस गीत का गाना बजाना आसान हो गया। भक्ति, उपासना, कर्मकाण्ड के साथ-साथ अन्धविश्वासों की आधारशिला पर त्रस्त मानव शान्ति के स्वर प्रयोग, धुन और गीत लोकगीतों के अंग बन गयें।[7]

लोकगीतों में संस्कारगीत, मौसम सम्बन्धी, व्रत उपासना और विविध गीत हैं, जिनमें सोहर, झूला, बारहमासा, होरी, चैती, कजरी, गारी, बिरहा, कीर्तन, कव्वाली, भरथरी, आल्हा, छठ आदि लामकगीतों में लोकजीवन जीवन्त होता है ये गीत बच्चों को भी आकर्षित करते हुए ऐतिहासिक सत्य प्रस्तुत करते हैं। अवधी ब्रज भोजपुरी छत्तीसगढी बुन्देलखण्डी, गढवाली, कुमांउनी, असमिया, डोगरी पंजाबी आदि भाषाओ में रचे गीत ग्राम्य जीवन की झांकी प्रस्तुत करते हैं। लोक में प्रचलित गीत, लोकसर्जित गीत लोक विषयक गीतों में लोक मन की लयपूर्ण अभिव्यक्ति लोककामना की स्वतः अभिव्यक्ति एवं लोकजीवन की छाया प्राप्त होती है। प्राकृतिक एवं सामूहिक भाव भूमि परम्परात्मकता तथा संगीतमय होना ही लोकसंगीत की विशेषता है।[8]

शास्त्रीय संगीत नियमबद्धता और अनुशासन के कारण वर्ग विशेष तक ही सीमित होकर जनसामान्य से दूर होता गया वहीं लोकसंगीत में यह सीमितता नहीं आई। वह विशेष अवसरों पर गाये जाते रहे तथा सुनने वाले आनन्द से झूमते रहे परन्तु शिष्ट एवं सभ्य समाज प्रायः इससे दूर ही रहा।

**नाटक और धार्मिक नाटक**

भरत मुनि के नाटय शास्त्र में कहा गया है कि श्रम, दुख तथा तप के परिश्रम से थके हुए तपस्वी जनों के विश्राम एवं मनोरंजन के लिये जो काम किये गए है वह ही नाटक है। अर्थात नाटकों के मूल में मनोरंजन है। इस मनोरंजन को शिक्षित और अशिक्षित दोनो प्राप्त करते हैं।

नाटकों का प्राचीन स्वरूप संस्कृत में बहुत पहले से चला आ रहा था। हिन्दी नाटकों का उदय 19 वीं सदी के उत्तरार्द्ध में हुआ तब से निरन्तर विकसित होते हुए आज परिष्कृत रूप में नाटको के द्वारा समाजिक बुराइयाँ, समाजिक परिवर्तन, विकास के सन्देशों का सफलता पूर्ण सम्प्रेषण किया जा सकता है। दहेज, मद्यपान आदि सामाजिक बुराईयों के उन्मूलन में इनकी प्रभावी भूमिका हो सकती है। नाटकों के दर्शक पात्रों के जीवन्त अभिनय से प्रभावित होकर नाटक के पात्रों का अनुकरण करने का प्रयास करते है।[9]

धार्मिक नाटकों का उदय भारतीय इतिहास के मध्य काल अर्थात सल्तनत एवं मुगलकाल में हुआ। इस्लामिक प्रभावों के कारण धार्मिक कृत्यों में व्यवधान तथा जनमानस में धर्म के प्रति उदासीनता बढनें लगी जिससे आने वाली पीढियाँ धार्मिक मान्यताओं से अनभिज्ञ होने लगी। इसके कारण समाज में शक्तिशाली प्रतिक्रिया उत्पन्न होने लगी और भक्ति आन्दोलन का उदय हुआ जिसका भारतीय समाज और संस्कृति पर गहरा प्रभाव पड़ा। भक्ति आन्दोलन के सामाजिक विस्तार में नाटय कला का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

रामलीला, रासलीला, नृसिंह लीला, जात्रा, कृष्णलीला, चैतन्य लीला आदि सभी भक्ति आन्दोलन की ही देन है। इन लीलाओं तथा धार्मिक नाटयों के माध्यम से लोगों में बचपन से अभिनय कला की ओर आकर्षण पैदा हुआ। लीला प्रदर्शन के मुखौटे, तीर-धनुष आदि के खिलौने बच्चे आदि खरीदते है और लीलाओं को दोहराने की कोशिश करते है। जिससे उनमें अभिनय के सहज बीज उत्पन्न हो जाते है, यह धार्मिक नाटको की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि रही है।[9]

**लोकनाट्य**

कालान्तर में भारत में इस्लामीकरण के बढ़ते प्रभाव के कारण नाट्यकर्मियों ने अपने को इस काम से अलग करके दूसरे व्यवसायों में लगा लिया और कुछ नाट्ककर्मियों ने बदली हुई परिस्थिति में समायोजन करके नाट्य कला को ही जीविकोपार्जन का साधन बनाया और पहले से चली आ रही लोकनाट्यों की परम्परा में घुल-मिलकर उसी प्रकार के नाट्य प्रयोग से अपने को जोड़ जिसके फलस्वरूप नट, भगत, रंगाचार्य जैसे लोग आए। इन लोगो ने श्वांग, तमासा, नौटंकी, भाण्ड़ आदि से लोगों को मनोरंजित एवं शिक्षित किया। देश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित इन जन नाट्यों को ही लोक-नाटय कहा जाता है।

नौटंकी, रामलीला, रासलीला, जात्रा, तमाषा, भाण्ड़, नॉच, ख्याल, नकल आदि भारत के प्रमुख एवं लोकप्रिय नाट्य है। जिनसे स्वस्थ मनोरंजन, सार्थक संदेश प्रेशण, क्षेत्रीय भाषा एवं परिवेश में होता है। यह कला आम लोगों में प्रचलित होने से लोक-नाट्य कला कही जाती है।[10]

**लोककला**

जनसमान्य में प्रचजिलत तथा अपनाई जाने वाली कला ही लोक कला कहलाती है। मनुष्य की सांस्कृतिक इच्छा जब कलात्मक सौन्दर्य के साथ अभिव्यक्त पाती है और उपलब्ध वस्तुओं में सुन्दरतम् रूप में प्रस्तुत होती है तो वह लोक कला का स्वरूप ग्रहण करती है। यह कला मानव मन की

www.ignited.in

आन्तरिक सर्जनात्मक प्रवृत्ति की प्रेरणा से उत्पन्न होती है। लोक कला का जन्म, कला के जन्म के साथ ही हुआ था। जब आदमी गुफाओं में निवास करता था तब भी लोककला का प्रचलन था। लोककला सामाजिक उत्सवों धार्मिक संस्कारों तथा अन्य विशिष्ट अवसरों पर कलाकृतियों के रूप में व्यक्त होती है।[11] जो देश के प्रत्येक ग्रामीण अन्चल में जहाँ भौतिक सुविधाएं और मशीनी वातावरण नहीं है, मिलती है। कालान्तर में यह घर आँगन से निकलकर कसीदाकारी, खिलौना, नक्कासी, पूजाघरों, भित्तिचित्रों एवं वस्त्रों आदि तक पहुँच गयी। कालहीनता और नामहीनता इस कला की मुख्य विषेशता है, और यह कला आत्मतुष्टि से प्रेरित है।

## कठपुतली

कठपुतली के खेल नगर और गाँव राजदरबार और धार्मिक स्थलों, अमीर-गरीब, शिक्षित-अशिक्षित में समान रूप से प्राचीन काल से प्रर्दशित होते चले आ रहे हैं। जिनके माध्यम से लोग मनोरंजन, शिक्षा, आत्म प्रर्दशन, सामाजिक कार्य करते है। कठपुतली नाट्क में रहस्य, रोमांच, हर्ष, संगीत, गीत, नृत्य का पुट रहता है। सांस्कृतिक विरासत को आगे ले जाने, सामाजिक जागरण को बढावा देने में कठपुतली का विशेष महत्व है। यह लोक कला अब लुप्त होती जा रही है। मद्य निषेध और परिवार कल्याण तथा साक्षरता अभियान को सफल बनाने के लिए कठपुतली की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

## बुन्देलखण्ड के लोक एवं पारंपरिक माध्यम

भाषायी आधार पर जहां के निवासियों की बोली बुन्देली है, भारत के मध्य भाग में तथा उत्तर प्रदेश के झाँसी, बाँदा, हमीरपुर, जालौन, ललितपुर, चित्रकूट, महोबा जिलों तथा मध्यप्रदेश के छतरपुर, टीकमगढ़, दतिया, पन्ना, अशोकनगर, सतना जिलों के सम्मिलित भूभाग को बुन्देलखण्ड़ क्षेत्र कहा जाता है। भाषायी तथा सांस्कृतिक विरासत के धनी इस क्षेत्र की अपनी एक विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान भी रही है। बुन्देलखण्ड़ की संस्कृति अपनी अलग विषेशता रखती है। बुन्देलखण्ड़ के लोकगीत, लोकनृत्य और वाद्ययन्त्र महत्वपूर्ण है। इसके लोकगीत मौसम, देवी-देवताओं, संस्कार, समाज की विषय वस्तुओं को लिये हुए है। वहीं लोकनृत्य, वधावा, पलना, दिवारी, होरी, राई और घट, जवारा, लंगुरिया, झिंझिया, ठोला, रावला, स्वांग आदि है। वही बुन्देली लोकवाद्य ढोलक, नगढिया, सारंगी, बासुरी, खंजरी, ठप, लोटा, चमीटा, झीका, मंजीरा और रमतुला है। राई बुन्देलखण्ड़ के महत्पूर्ण एवं मशहूर नृत्यों में शामिल है। इस नृत्य को कभी सामन्तवादी व रसिक वर्ग को रिझाने के लिए बेड़नी समुदाय की स्त्रियाँ द्वारा किया जाता था। श्रृंगार रस प्रधान इस नृत्य में मृदंग, ढोलक वादक भी नृत्य करते है। नाचते-नाचते नर्तकी जिस प्रकार थाली में राई का दाना लुढकता है नर्तकी उसी तरह मंच पर गतिशील रहती है। इसके अतिरिक्त दीपावली के अवसर पर किया जाने वाला दिवारी नृत्य, जिसमें कृष्ण तथा ग्वालों का रूप वर्णित किया जाता है। नर्तक मोर पंख हाथ में लिये रहते है और कमर में मोर पंख बांधे रहते है। ढोल, नगड़िया, रमतुला वाद्य यंत्रो का प्रयोग करते हुए नृत्य करने वाले डंडो को बांधकर अपने ताल को बांधते है। होली के अवसर पर किया जाने वाला होली नृत्य जिसमें, टोली बनाकर ग्रामीण अंचलो में कुछ पुरूष नारियों का वेश बनाते है तो कुछ जोकर का लिवास पहनकर रंग-गुलाल उडाते हुए गायन-वादन के साथ नृत्य करते है। अपने गीतों में राधा-कृष्ण तथा गोपियों का चित्रण करते है।

मोनिया नृत्य के लिए दीपावली के अगले दिन गोवर्धन पूजा के दौरान नर्तक मौन व्रत रखते है। नृत्य में कमर में घुंघरू आँखो में काजल और चेहरे पर हल्दी और रोली का तिलक लगा के दण्डो को आपस में टकराते हुए विभिन्न मुद्राओं में कला दण्ड़ करते हुए ठुमक-ठुमक के नाचते है। वहीं खुशी या मांगालिक कार्यो में रावला नृत्य किया जाता है। रावला में सभी संवाद एवं अभिनय हास्य प्रधान होते है इस नृत्य में स्त्री की भूमिका पुरूष करते है। नृत्य में आवश्यक एक कलाकार जिसे जोकर कहा जाता है, अपनी ऐसी वेष-भूषा तथा भावभंगिमा से इस प्रकार अभिनय करता है कि जिसे देख कर हंसी का वातावरण प्रस्तुत बन जाता है।

लोकगीतों में आल्हा का बहुत बड़ा महत्व है यह बरसात के महीनों में गाया जाता है। कविवर जगनिक का आल्हाखण्ड़ कई कथानको का सम्मिलित रूप है जिसमें शौर्य, पराक्रम, युद्ध आदि का विस्तार से वर्णन है। इसमें आल्हा ऊदल के चरित्र तथा परमाल और पृथ्वीराज के बीच लड़ाई का वर्णन मिलता है। बुन्देलखण्ड़ में माघ माह का बडा महत्व है। इस माह में धार्मिक लोकगीत, शंकर गणेश, गंगा नर्मदा आदि की महिमा में गाये जाते है लमटेरा गीत बड़ी श्रद्धा और लम्बी टेर के साथ गाये जाते है। हरवोला या हरबोला बुन्देलखण्ड़ का एक प्रेरणा दायक गायन है जिसने भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौर में विशेषकर बुन्देलखण्ड क्षेत्र में जागरूकता उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया था। इसमें एक वर्ग के लोग हाथों में मजीरा, सारंगी, इकतारा, कन्धे पर फटी सी गुदरी लटकाये सारंगी और मंजीरों की धुन पर लोक गाथाएँ दोहे गाते हुए हर-हर बम का जयकारा लगाते हुए घर-घर सन्देशात्मक गायन करते हुए आगे बढ जाते थे यहीं लोग हरवोले कहलाए। ये लोग कुछ माँगते नहीं थे जो वस्त्र, अन्न, पैसा मिला जाता था उसी से

www.ignited.in

अपना तथा जीवन निर्वाह करते थे। यह आजादी के संदेश को व्यापक बनाते थे जबकि अंग्रेज लोग इन्हें भिक्षा मांगने वाले समझते थे। आज भी बुंदेलखण्ड के गाँव में सुबह प्रहर राम नाम या हरि की कीर्तन करते हुए मण्ड़लीबद्ध लोग फेरी लगाते है। लोगों को जगाते हुए आध्यात्मिक प्रेरणा देते हैं।

**लोक एवं पारम्परिक माध्यमों की सार्थकता**

लोक एवं पारम्परिक माध्यमों की सबसे बड़ी विषेशता है कि दैनिक जीवन की बातों को उन्हीं के भाषा एवं परिवेश में सम्प्रेषित किया जाता है जिससे लोग सरलता से समझते हुए पात्रों के चरित्र का अनुकरण करने की कोशिश करते है तथा आनन्द प्राप्त करते है। यह देखा गया है कि आधुनिक माध्यमों की तुलना में इनका प्रभाव दीर्घकालिक होता है और यह माध्यम सूचना की जगह ज्ञान को परोसने के सक्षम माध्यम है।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को गति देने में महत्वपूर्ण गति रही है। लोकमान्य तिलक ने गणेशोत्सव एवं शिवाजी उत्सव जैसे समारोहो का शुभारम्भ किया। इसके पूर्व 1857 के विद्रोह के समय आल्हा, कथा-कीर्तन और ग्रामीण नाटको ने महत्वर्पूण भूमिका निभायी। गांधी जी ने भजन और कीर्तन के माध्यम से समरस्ता और आन्दोलन के लक्ष्य को देशव्यापी बनाया। इप्टा थियेटर ने भी गाँव के लोगों ने आर्थिक विषमता, शोषण के आदि के मुददों को नुक्कड़ नाटकों के माध्यम से लोगों को शिक्षित किया। देश के विभिन्न हिस्सों में धार्मिक उत्सवों, लोकगीतों, लोकनृत्यों, रामलीला, लोकनाटको आदि के माध्यम से स्वतंत्रता का सन्देश गाँव-गाँव में फैलाया एवं आन्दोलन को राष्ट्रव्यापी और गतिशील बनाया गया। इस प्रकार से देश को आजादी दिलाने में लोक माध्यमों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश के विकास हेतु सरकारों द्वारा प्रारम्भ की गई लोक कल्याण की योजनाओं के प्रचार प्रसार हेतु लोक माध्यमों का भरपूर उपयोग किया गया। ग्रामीण विकास योजनाएं, गरीबी उन्मूलन, परिवार कल्याण आदि कार्यक्रम तत्कालीन सरकारों द्वारा चलाए गए जिनकी जानकारी सरकारी अथवा गैर सरकारी संगठनो द्वारा प्रचारित की गई। प्रायः लोक माध्यमों द्वारा ही ग्रामीण और अशिक्षित जनता को इन विकास योजनाओं के बारे जानकारी दी गई।

सामाजिक परिवर्तन में भी लोकमाध्यम अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। समाज में फैले अन्धविश्वास, कुप्रथाओं आदि के विरूद्ध लोगों को जागृत करने में अग्रणी माध्यम है। साक्षरता अभियान की सफलता तो पूर्ण रूप से लोक माध्यामों पर ही निर्भर है। लोकगीत, चैपाल, कठपुतली, लोकनाट्य आदि प्रचलित और लोकप्रिय माध्यमों द्वारा दहेज निवारण, मद्य-निषेध आदि कार्यक्रमों को सफलता पूर्वक क्रियान्वयन किया जा सकता है। शिक्षा के प्रसार द्वारा समाज में व्याप्त बुराईयों को भी लोक माध्यमों के समुचित तथा प्रभावी प्रयोग से दूर किया जा सकता है।

जनसंख्या नियंत्रण व परिवार कल्याण कार्यक्रमो के सफल क्रियान्वयन में लोक माध्यमों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। समाज के छोटे से छोटे आदमी तक परिवर्तन को पहुचाने के लिए लोक माध्यम सर्वथा उपयुक्त है।

समस्त विश्व के देशों के तीन भागों में विभाजित किया जाता है। विकसित, विकासशील और अल्पविकसित। एशिया और अफ्रीका के देश विकासशील और अल्पविकसित श्रेणी के राष्ट्र है। विकासशील एवं अल्पविकसित राष्ट्रों के लिए संचार क्रान्ति के इस युग में भी लोक माध्यमों की महत्वपूर्ण उपयोगिता है। संचार माध्यमों की विसंगतियों को दूर करने के लिए तथा राष्ट्रों के बीच निष्पक्ष और स्वतंत्र सूचना प्रवाह को बनाए रखने के लिए अन्तराष्ट्रीय संगठन यूनेस्को ने बहुत प्रयास किए। इसी क्रम में मैकब्राइट आयोग का गठन किया गया। जिसने अपनी रिपोर्ट में पारम्परिक लोक माध्यमों की उपयोगिता को स्वीकार किया और इस स्पष्ट किया कि कोई भी संचार संरचना तब तक पूर्ण नहीं हो सकती है जब तक उसमें लोक माध्यमों का समावेश न हो। आयोग ने माना कि संचार के आधुनिक तकनीक के वाबजूद पारम्परिक लोक माध्यम में सार्थक सन्देश सम्प्रेषण की अदभुत क्षमता है और सामाजिक परिवर्तन में ये माध्यम महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सक्षम है।

लोक माध्यमों के इस उपयोगिता के चलते विकासशील राष्ट्र इन माध्यमों का संरक्षण करने लगे। यूनेस्को ने भी इन लोक माध्यमों को सांस्कृतिक धरोहर के रूप में संरक्षित एवं विकसित करने का प्रयास किया साथ ही आर्थिक सहायता देते हुए राष्ट्रों के मध्य सांस्कृतिक आदान-प्रदान बढाने पर भी बल दिया है। जिससे हर राष्ट्र की संस्कृति का अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचार-प्रसार हो सकें। दक्षेस जैसे क्षेत्रीय संगठन भी इस दशा में लोक माध्यमों के उन्नयन हेतु कार्यरत है।

**उपसंहार**

वर्तमान युग संचार क्रांति का युग है। इसके बावजूद लोक एवं पारम्परिक माध्यमों की महत्वता बनी हुई है। पारम्परिक माध्यमों के सार्थक संदेश सम्प्रेशण के प्रभाव क्षमता में कमी

www.ignited.in

नहीं आयी है बल्कि इन माध्यमों के कुशल उपयोग में कमी आयी है। आज पारम्परिक माध्यमों की व्यापक प्रभाव एवं क्षमता का उपयोग इलेक्ट्रानिक मीड़िया द्वारा किया जा रहा है। यह आधुनिक माध्यम सरकार की विकास योजनाओं को जनता तक पहुचाने के लिए लोक संगीत एवं लोक नृत्य जैसे माध्यमों का भरपूर उपयोग करते है। परिवार कल्याण कार्यक्रम, टीकाकरण, पोलियों उन्मूलन आदि की जानकारी क्षेत्र की जनता को इन्हीं माध्यमों के उपलब्ध होती है। नाटकों का स्थान धारावाहिकों ने ले लिया है। कठपुतली के स्थान पर टी.वी. पर कार्टून फिल्में लोकप्रिय हो रही है। तीन-चार दशक पहले लोकमाध्यमों का जो विकसित रूप था उसमें परिवर्तन आया है। इसका मुख्य कारण संचार क्रांति है, परन्तु भारत जैसे देश में जहाँ 65 प्रतिशत आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है, जहाँ आधुनिक माध्यम की उपलब्धता एवं समझ अत्यन्त न्यून है ऐसे में लोक एवं पारम्परिक माध्यमों की उपयोगिता एवं क्षमता को नकारा नहीं जा सकता है बल्कि उनका बेहतर प्रयोग किया जा सकता है।

शहर पर आधारित आधुनिक माध्यमों की तुलना में ग्राम आधारित लोक माध्यम ग्रामीण लोगो के द्वारा अधिक विश्वसनीयता से स्वीकार किये जाते है। पारम्परिक माध्यमों पर परिवार कल्याण, अशिक्षा आदि कार्यो का प्रभावी ढंग से सन्देश दिया जाता है। लन्दन सेमिनार ने घोषित किया था कि परिवार नियोजन जैसे कार्यक्रमों के लिए परंपरागत माध्यम अत्याधिक प्रभावी है।

## संदर्भ ग्रंथ


1. सिंह, ओम प्रकाश, (1993). संचार माध्यमों का प्रभाव, नई दिल्ली, क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, प्रथम संस्करण, पृष्ठ 55।
2. Diringer, David (1982). The Book before Printing: Ancient, Medieval and Oriental, Courier Dover Publications, Google Print: p. 27
3. गुप्त नर्मदा प्रसाद, बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, प्रथम संस्करण, 1995
4. सिंह, राजबीर. राजभाषा हिंदी स्वरूप और प्रयोग, डॉ. बुक सेंटर, 2002 पृष्ठ 65
5. सिंह, ओ.पी. संचार और पत्रकारिता के विविध आयाम, नई दिल्ली: क्लासिकल पब्लिसिटी कंपनी, प्रथम संस्करण 2004
6. झा, मुक्तिनाथ जनसंचार के पारंपरिक माध्यमों का उद्भव एवं विकास, नई दिल्ली: भावना प्रकाशन
7. उपरोक्त
8. उपरोक्त
9. झा, मुक्तिनाथ जनसंचार के पारंपरिक माध्यमों का उद्भव एवं विकास, नई दिल्ली: भावना प्रकाशन
10. Rangnath, H.K., Folk Media and communication, chintana prakashan, Mysore
11. Parmar, Shyam (1975). Traditional Folk Media in India, Geka Book, New Delhi



**Corresponding Author**

**Jai Singh***

Assistant Professor, Bhaskar Institute of Mass Communication and Journalism, Bundelkhand University, Jhansi


www.ignited.in